4 यशपाल

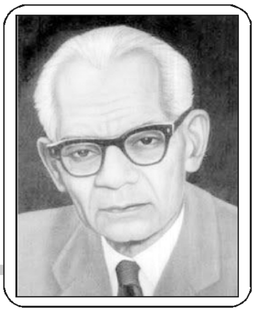

व्यक्तित्व

यशपाल का जन्म 1903 ई० में फिरोजपुर छावनी (पंजाब) में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल-कांगड़ी में हुई, जहाँ के राष्ट्रीय वातावरण ने उनके मन को प्रभावित एवं उद्वेलित किया। तत्पश्चात् नेशनल कालेज, लाहौर में आप भगतसिंह तथा सुखदेव जैसे क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आये और अन्य सशस्त्र-क्रान्तिकारी-आन्दोलनों में सक्रिय हो उठे। राजद्रोह के अभियोग में आपको कारावास का दण्ड मिला। आपने लखनऊ से एक लोकप्रिय मासिक पत्र 'विप्लव' प्रकाशित किया। जेल-जीवन में भी आप स्वाध्याय तथा कहानी-लेखन में रत रहे। आपका देहावसान 26 दिसम्बर, 1976 ई० को हुआ।

कृतित्व

यशपाल जी के कथा-संकलन हैं—**'पिंजरे की उड़ान'**, **'ज्ञानदान'**, **'अभिशप्त'**, **'तर्क का तूफान'**, **'भस्मावृत'**, **'चिन्गारी'**, **'वो दुनिया'**, **'फूलो का कुर्ता'**, **'धर्मयुद्ध'**, **'उत्तराधिकारी'**, **'चित्र का शीर्षक'**, **'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुन्दर हूँ; 'बीबीजी कहती हैं'**; **'मेरा चेहरा रौबीला है'**। **'दादा कामरेड'**, **'देशद्रोही'**, **'पार्टी कामरेड'**, **'दिव्या'**, **'मनुष्य के रूप में'**, **'अमिता'** तथा **'झूठा-सच'** आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। आपके निबन्धों तथा संस्मरणों के संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।

कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

यशपाल जी यशस्वी कथाकार थे। यथार्थवादी तथा प्रगतिशील कहानीकारों में आपका विशिष्ट स्थान है। आपकी कहानियों में जीवन-संघर्ष में रत सन्तप्त मानव का स्वर मुखर हो उठा है। आप पर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव था।

आपने समस्या-प्रधान कहानियों की रचना की है। आपकी कहानियों के कथानक सरल एवं स्पष्ट हैं। वे अधिकतर मध्यवर्गीय जीवन से चुने गये हैं। कथावस्तु जन-जीवन के व्यापक क्षेत्र से सम्बद्ध है तथा सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत करती है। आपने विविध वर्गों, स्थितियों एवं जातियों के पात्रों का चयन किया है तथा उनके जीवन-संघर्ष, विद्रोह एवं उत्साह के सजीव चित्र प्रस्तुत किये हैं। चरित्र-चित्रण मनोवैज्ञानिक है। यशपाल सामाजिक-जीवन के सन्दर्भ में मानव के मानसिक द्वन्द्वों के कथाकार थे। आपकी प्रमुख कहानियाँ हैं—**'धर्मयुद्ध'**, **'फूल की चोरी'**, **'चार आने'**, **'अभिशप्त'**, **'कर्मफल'**, **'फूलो का कुर्ता'**, **'पाँव तले की डाल'**, **'वर्दी'**, **'उत्तमी की माँ'** आदि।

आपकी कहानियाँ जन-सामान्य से सम्बद्ध हैं, अतः आपकी कहानियों की भाषा-शैली व्यावहारिक एवं सरल है। आपने सर्व-सामान्य में प्रचलित अन्य भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग किया है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग से रोचकता में वृद्धि हुई है। सामाजिक विकृतियों पर आपने बड़े तीखे व्यंग्य किये हैं। कहानियों में कथोपकथन अकृत्रिम एवं स्वाभाविक हैं। वे पात्रों की मनोदशा का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करने के साथ-साथ कथावस्तु को विकसित करने में योग देते थे।

●●●

समय

पापा की अवचेतना में रिटायर हो जाने से डेढ़-दो वर्ष पूर्व से ही चिन्ता सिर उठाने लगी थी—रिटायर हो जाने पर अवकाश का बोझ कैसे सँभलेगा? अपनी इस चिन्ता का निराकरण करने के लिए प्रायः ही कहने लगते—"लोग-बाग रिटायर होकर निरुत्साह क्यों हो जाते हैं? सोचिये नौकरी करते समय अवकाश के दिनों की प्रतीक्षा की जाती है। जब दीर्घ श्रम के पुरस्कार में पूर्ण अवकाश का अवसर आ जाये तो निरुत्साह होने का क्या कारण? इसे तो अपने श्रम का अर्जित फल मानकर, उससे पूरा लाभ उठाना और सन्तोष पाना चाहिए। अभाव होगा या मुक्ति मिलेगी केवल मजबूरी से, ड्यूटी की मजबूरी से। आराम और अपनी इच्छा से श्रम करने में तो कोई बाधा नहीं डालेगा। अध्ययन का मनचाहा अवसर होगा और पर-आदेश से मुक्ति। इससे बड़ा सन्तोष दूसरा क्या चाहिए?"

पापा के मन में बुढ़ापे और बुजुर्गी से या कहिए बूढ़े और बुजुर्ग समझे जाने से सदा विरक्ति रही है। रिटायर होने पर मितव्ययिता के विचार से गर्मियों में पहाड़ जाना छोड़ दिया है। सर्विस के समय गर्मियों में महीने-दो-महीने हिल स्टेशनों पर रह लेने का बहुत शौक था। प्रतिवर्ष नहीं तो दूसरे वर्ष अवश्य पहाड़ जाते थे। पहाड़ जाते तो चढ़ाइयों पर सुविधा से चल सकने के लिए एक-दो छड़ियाँ जरूर खरीद लेते और हर बार नयी छड़ियाँ खरीदते। परन्तु लखनऊ लौटने पर बाजार या सैर के लिए जाते समय छड़ी उनके हाथ में न रहती। कभी स्वास्थ्य का विचार आ जाता या शरीर पर माँस अधिक चढ़ने की आशंका होने लगती तो सुबह-शाम तेज चाल से सैर आरम्भ कर देते। प्रातः मुँह-अँधेरे सैर के लिए जाते समय अम्मी के सुझाने पर कुत्तों या ढोर-डंगरों से सावधानी के लिए छड़ी हाथ में होने पर भी उसे टेककर न चलते थे। छड़ी को पुलिस या सैनिक अफसर की तरह, बेटन की ढंग से, हाथ में लिये रहते। छड़ी टेककर चलना उनके विचार से बुढ़ापे या बुजुर्गी का चिह्न था।

पापा का कायदा था कि सन्ध्या समय टहलने के लिए अथवा शापिंग के लिए भी जाते तो केवल अम्मी को साथ ले जाते थे। बच्चों को साथ ले जाना उन्हें कम पसन्द था। अन्य बच्चों की तरह हम लोगों को भी अम्मी-पापा के साथ बाजार जाने की उत्सुकता बनी रहती थी। बाजार में हम बच्चे कोई भी चीज माँग लेते तो तनिक ठुनकने से ही मनचाही चीज मिल जाती थी। बाजार में पापा हम लोगों को डाँटते-धमकाते नहीं थे। उन्हें बाजार में तमाशा बनना पसन्द नहीं था। इसलिए अम्मी और पापा बाजार जाने के लिए तैयार होने लगते तो हम लोगों को नौकर या आया के साथ इधर-उधर टहला दिया जाता। बच्चों को बाजार ले चलने की अनिच्छा में सम्भवतः पापा की बुजुर्ग न जान पड़ने की भावना भी अवचेतना में रहती होगी।

पापा ने अवकाश प्राप्त हो जाने पर अवकाश के बोझ से बचने के लिए अच्छी खासी दिनचर्या बना ली है। अवकाश-प्राप्ति से कुछ महीने पूर्व ही उन्होंने योजना बना ली थी कि शासन-कार्य के छत्तीस वर्ष के अनुभव और चिन्तन के आधार पर 'एथिक्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' (शासन का नैतिक पक्ष) पर एक पुस्तक लिखेंगे। दोपहर से पूर्व और अपराह्न में कम-से-कम दो-दो घण्टे इस विषय में अध्ययन करते रहते हैं अथवा नोट्स लिखते रहते हैं। पहले उन्हें काम के दबाव के कारण कम अवसर मिलता था परन्तु अब सप्ताह में एक-दो दिन निकट सम्बन्धियों और इष्ट-मित्रों की खोज-खबर लेने भी चले जाते हैं। अब किसी हद तक वे शापिंग भी करने लगे हैं। रसद और साग-सब्जी की खरीद उनके बस की नहीं। वह काम पहले अम्मी करती थीं और अब भी रिक्शा पर बैठकर स्वयं ही करती हैं। अलबत्ता हल्की-फुल्की चीजें, टूथब्रुश, ब्लेड, सिगार-सिगरेट, मोजे-रुमाल और दवा-दारू की खरीद के लिए पापा सन्ध्या के समय स्वयं हजरतगंज पैदल जाते हैं। कारण वास्तव में कुछ चलने-फिरने का बहाना।

पापा के स्वभाव और व्यवहार में कुछ और भी परिवर्तन आये हैं। पहले उन्हें अपनी पोशाक चुस्त रखने और व्यक्तिगत की बढ़िया चीजों का शौक रहता था। पोशाक के मामले में वे बिलकुल बेपरवाह नहीं हो गये हैं। परन्तु गत तीन वर्षों में जाड़े के आरम्भ में अम्मी हर बार उनसे एक नया ऊनी सूट बनवा लेने का अनुरोध कर रही हैं। पापा पुराने कपड़ों को काफी बताकर टाल जाते हैं। यही बात जूतों के मामले में भी है। अम्मी खीझकर कहती हैं—अपने लिये उन्हें जाने क्या कंजूसी हो गयी है! बच्चों को पहाड़ पर या सैर के लिए बाहर भेज देंगे। उनके लिये कपड़ों की जरूरत भी दिखायी दे जाती है; अपने लिये कुछ नहीं!...लगता है पापा अब अपने शौक और रुचियों को बच्चों द्वारा पूरा होते देखकर सन्तोष पाते हैं; मानो उन्होंने अपने व्यक्तित्व का न्यास बच्चों में कर लिया है।

पापा के बच्चों को बाजार साथ न ले जाने के रवैये में भी परिवर्तन हो गया है। उनके रवैये में परिवर्तन का एक प्रकट कारण यह हो सकता है कि अम्मी अब अपने स्वास्थ्य के कारण पैदल चलने से कतराती हैं और हम लोग उँगली पकड़कर साथ चलने वाले बच्चे नहीं रह गये हैं। कभी पापा या अम्मी के साथ चलना होता है तो हमारे कन्धे उनके बराबर या कुछ ऊँचे ही रहते हैं। पापा को आशंका नहीं है कि बच्चे बाजार में गुब्बारेवाले या आइसक्रीम वाले को देखकर हाथ फैलाकर ठुनकने लगेंगे। अब शायद अपने जवान, स्वस्थ, सुडौल बच्चों की संगति में उन्हें कुछ गर्व भी अनुभव होता होगा। इसलिए सन्ध्या समय हजरतगंज या बाजार जाते समय कभी मुझे, कभी मन्टू बहन को, कभी गोगी को, कभी कजिन पुष्पा को ही साथ चलने का संकेत कर देते हैं। उनके साथ हजरतगंज जाने पर हम लोगों को चाकलेट-टॉफी या आइसक्रीम के लिए कहना नहीं पड़ता। पापा हजरतगंज का चक्कर पूरा करके स्वयं ही प्रस्ताव कर देते हैं—"कहो, क्या पसन्द करोगे? कॉफी या आइसक्रीम?"

हमारे समवयस्क साथी हम लोगों को बाजार, पार्क या रेस्तरां में पापा के साथ देखकर कभी-कभी आँख दबाकर या किसी संकेत से हमारी स्थिति के प्रति विद्रूप या करुणा प्रकट कर देते हैं। निस्सन्देह पापा की उपस्थिति में सभी प्रकार की हरकतें या बातें नहीं की जा सकतीं परन्तु उनकी संगति बोर या उबा देने वाली भी नहीं होती। वे अन्य अवकाश-प्राप्त लोगों की सामान्य प्रवृत्ति के अनुसार केवल अपनी नौकरी के अनुभवों, ऐडवेंचर्स, नवयुवक लड़के-लड़कियों के लिए उपयुक्त विवाह-सम्बन्धों अथवा पुराने जमाने की सस्ती और आज की मँहगाई की ही चर्चा नहीं करते। उनके मानसिक सम्पर्क और चिन्ताएँ वैयक्तिक और पारिवारिक क्षेत्र में सिमट जाने के बजाय पढ़ने और सोचने का अधिक अवसर पाकर कुछ फैल ही गयी हैं। उनकी बातचीत में चुस्ती और हाजिर-जवाबी कम नहीं हुई बल्कि अपने को तटस्थ और अनासक्त समझ लेने से उनका तीखापन कुछ बढ़ गया। परन्तु हम लोग उनकी संगति के लिए बचपन के दिनों की तरह लालायित नहीं रह सकते। कारण यह है कि अठारह-बीस पार कर लेने पर हम लोग भी अपना व्यक्तित्व अनुभव करने लगे हैं। हम लोगों की अपनी वैयक्तिक रुझाने, अपने काम और अपने क्षेत्र भी हो गये हैं और उनके आकर्षण और आवश्यकताएँ भी रहती हैं। कभी-कभी पापा की आवश्यकता और हमारी संगति के लिए उनकी इच्छा और हमारी अपनी आवश्यकताओं और आकर्षणों में द्वन्द्व की स्थिति आ जाना अस्वाभाविक नहीं है।

सन्ध्या समय हम लोगों में से किसी-न-किसी को साथ ले जाने की इच्छा में पापा के दो प्रयोजन हो सकते हैं। एक प्रयोजन तो वे स्वीकार करते हैं। उन्हें बूढ़ों या बुजुर्गों की अपेक्षा नवयुवकों की संगति अधिक पसन्द है। दूसरा कारण पापा प्रकट नहीं करना चाहते। लगभग एक वर्ष से उनकी नजर पर आयु का प्रभाव अनुभव हो रहा है। अधिक देर तक पढ़ने-लिखने से धुँधलापन अनुभव होने लगता है। विशेषकर सूर्यास्त के पश्चात् यदि सड़क पर प्रकाश कम हो तो ठोकर खा जाते हैं और प्रकाश अधिक होने पर चकाचौंध से परेशानी अनुभव करते हैं। इसलिए सन्ध्या समय बाहर जाते हैं तो हम लोगों में से किसी को साथ ले जाना चाहते हैं।

पिछले जाड़ों की बात है। उस दिन डाक में आयी पत्रिका में एक बहुत रोचक लेख पढ़ रहा था। पापा के कमरे से अम्मी को सम्बोधन करती आवाज सुनायी दी—"एक जग गरम पानी भिजवा देना।" यह संकेत था कि दिन ढल गया है, पापा बाहर जाने की तैयारी आरम्भ कर रहे हैं। तब ध्यान आया, सूर्यास्त का समय हो जाने से कमरे में प्रकाश कर लेना चाहिए था परन्तु वह यात्रा-वर्णन समाप्त किये बिना पत्रिका हाथ से छूट न रही थी।

पापा की बाहर जाने की तैयारी अनेक घोषणाओं और पुकारों के साथ होती है ताकि सब जान जायँ—वे बाहर जा रहे हैं और कोई उनके साथ हो ले। मैंने सुना तो, परन्तु मन जापान के उस यात्रा-वर्णन में गहरा रमा हुआ था। पढ़ते-पढ़ते भी पापा की बाहर जाने की तैयारी की आहटें कान में पड़ रही थीं।

आहट से अनुमान हो रहा था कि पापा बाहर जाने के लिए जूते पहन चुके होंगे, टाई बाँध ली होगी। उनके कमरे से पुकार आयी—''कोई है हजरतगंज की सवारी।''

पापा की पुकार के स्वर से अनुमान हुआ कि उन्होंने ऊपर के कमरों की ओर मुँह करके पुकारा था। मेरे कमरे से अपनी तैयारी की कोई प्रतिक्रिया न सुनकर उन्होंने लड़कियों को पुकार लिया था। ऊपर से भी कोई उत्तर न आने पर पापा ने फिर पुकारा—''है कोई चलने वाला!''

पापा की इस पुकार की प्रक्रिया में ऊपर पुष्पा दीदी के कमरे से सुनायी दिया—''मन्टू, जाओ न, पापा के साथ घूम आओ।''

मन्टू ने अपने कमरे से पुष्पा दीदी को उत्तर दिया—''तुम भी क्या दीदी... बोर... बुड्ढों के साथ कौन बोर हो!''

मन्टू ने अपने विचार में स्वर दबाकर उत्तर दिया था, परन्तु उसकी बात पापा के समीप के कमरे में भी मैं सुन सका था। पत्रिका आँखों के सामने से हट गयी। नजर पापा के कमरे में चली गयी। पापा ने जरूर सुन लिया था। जान पड़ा, वे कोट हैंगर से उतारकर पहनने जा रहे थे, कोट उनके हाथ में रह गया। चेहरे पर एक विचित्र, विषण्ण-सी मुस्कान आ गयी। कोट उसी प्रकार हाथ में लिये कुर्सी पर बैठ गये। नजर फर्श की ओर परन्तु चेहरे पर विषण्ण मुस्कान। कई क्षण बिलकुल निश्चल बैठे रहे, मानो किसी दूर की स्मृति में खो गये हों।

मैंने दृष्टि पापा की ओर से हटा ली कि नजर मिल जाने से संकोच अथवा असुविधा न अनुभव करें। फिर पत्रिका उठा ली परन्तु पढ़ न पाया। अनुमान कर रहा था—'पापा क्या सोच रहे होंगे?' सहसा स्मृति में बचपन की याद कौंध गयी—तब हम लोग उनके साथ बाहर जाने के लिए कितने लालायित रहते थे। हमारी उस लालसा से उन्हें कभी-कभी परेशानी भी अनुभव हो जाती थी। एक दिन की स्मृति आँखों के सामने प्रत्यक्ष दिखायी देने लगी—

हम लोग अम्मी और पापा के साथ बाहर जाने की जिद करते तो पापा को अच्छा नहीं लगता था। अम्मी ऐसी अप्रिय स्थिति से बचने का यह उपाय करती थीं कि स्वयं बाहर जाने के लिए साड़ी बदलने से पहले हमें आया हुबिया या नौकर बहादुर के साथ कुछ समय के लिए बाहर भेज देती थीं। हम लोगों के लौटने से पहले ही अम्मी और पापा बाहर जा चुके होते।

एक दिन सन्ध्या समय अम्मी ने हम दोनों को बुलाकर कहा—''बच्चों, हुबिया साग-सब्जी लेने चौराहे तक जा रही है। तुम लोग भी घूम आओ।'' उन्होंने हुबिया से भी कह दिया—''देखो, कुंजड़े के यहाँ ताजे नरम सिंघाड़े हों तो इन दोनों को ले देना।''

हम लोग हुबिया के साथ घर से बीस-पच्चीस कदम गये थे। मन्टू ने मुझे रोककर कहा—''सुनो, अम्मी पापा के साथ बाजार जा रही हैं। हम भी उनके साथ बाजार जाएँगे।'' मन्टू ने हुबिया को सम्बोधन किया, ''हुबिया, हमारी सैण्डल में कील लग रहा है। हम दूसरी सैण्डल पहनकर आते हैं।'' हम दोनों घर की ओर भाग आये।

मन्टू का अनुमान ठीक था। हम लौटे तो ड्योढ़ी में पहुँचते ही अम्मी की पुकार सुनायी दी—''जी, आइए, मैं चल रही हूँ।'' अम्मी बाहर जाने के लिए साड़ी बदले और जूड़े में पिनें खोंसती हुई आ रही थीं।

मन्टू अम्मी की कमर से लिपट गयी और डबडबाई आँखें अम्मी के मुँह की ओर उठाकर आँसू-भरे स्वर में हिचक-हिचककर गिड़गिड़ाने लगी—''कभी... कभी... कभी बच्चों को भी... तो... साथ... ले जाना चाहिए।''

तब तक पापा भी आ गये थे। उन्होंने पूछा—''क्या है, क्या है?'' वे समझ गये थे, बोले—''अच्छा बच्चों, एकदम तैयार हो जाओ।''

अम्मी ने कहा—''आ मन्टू, तेरी फ्राक बदल दूँ।''

परन्तु मन्टू, अपनी इस हरकत से इतना शरमा गयी थी कि दोनों हाथों में मुँह छिपाकर भाग गयी। पापा और अम्मी के कई बार बुलाने पर भी नहीं आयी।

बात पापा के मन में लग गयी। उस समय बाहर नहीं जा सके। उसके बाद से हफ्ते-पखवाड़े में हम लोगों को भी बाजार ले जाने लगे थे। कभी-कभी खाने की मेज पर हम लोगों के साथ बैठने पर उस दिन की घटना—मन्टू रो-रोकर 'बच्चों को भी कभी साथ ले जाने' की दुहाई देने की बात सुनाने लगते और इसी प्रसंग से मन्टू झेंप जाती है।

आज पापा के साथ चलने के अनुरोध का उत्तर मन्टू दे रही है—''बोर... बुड्ढों के साथ बोर... ''

पापा सहसा, मानो दृढ़ निश्चय से, कुर्सी से उठ खड़े हुए। कोट पहन लिया और अम्मी को सम्बोधन कर पुकारा—''सुनो, कई बार पहाड़ से छड़ियाँ लाये हैं, तो कोई एक तो दो!''

एक छड़ी उठाकर मैंने अपने कमरे में रख ली थी। पापा को उत्तर दिया, ''एक तो यहाँ पड़ी है, चाहिए?'' छड़ी कोने से उठाकर पापा के सामने कर दी।

''हाँ, यह तो बहुत अच्छी बात है।'' पापा ने छड़ी की मूठ पर हाथ फेरकर कहा और छड़ी टेकते हुए किसी की ओर देखे बिना घूमने के लिए चले गये? मानो हाथ की छड़ी को टेककर उन्होंने समय को स्वीकार कर लिया।

अभ्यास प्रश्न

1. 'समय' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
2. कथावस्तु की दृष्टि से 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
3. कहानी के प्रमुख तत्त्वों को दृष्टि में रखते हुए 'समय' कहानी की विशेषताएँ लिखिए।
4. 'समय' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
5. 'समय' कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
6. सप्रमाण सिद्ध कीजिए कि 'समय' एक सफल कहानी है।
7. 'समय' कहानी में ''यशपाल ने मध्यवर्गीय जीवन की विषम परिस्थितियों की ओर संकेत किया है।'' इस कथन की व्याख्या कीजिए।
8. 'समय' कहानी किस वर्ग-विशेष का प्रतिनिधित्व करती है? इसके विभिन्न रूपों पर प्रकाश डालिए।
9. अच्छी कहानी की सबसे बड़ी पहचान है कि उसे पढ़कर पाठक के मुँह से अनायास निकल जाय कि 'सच कहा है।' इस कथन के आधार पर 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
10. वातावरण और भाषा-शैली की दृष्टि से 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
11. पारिवारिक सम्बन्धों के विषय में 'समय' शीर्षक कहानी कौन-सा दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है?
12. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'समय' कहानी की समीक्षा कीजिए।
13. 'समय' कहानी की समीक्षा देश-काल के आधार पर कीजिए।
14. 'समय' कहानी के पात्रों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
15. 'समय' कहानी के मुख्य पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।
16. 'समय' कहानी के प्रमुख पात्र की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।